© 2018 IJSRSET | Volume 4 | Issue 6 | Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN: 2394-4099

# महाकवि भवभूति कृत महावीरचरितम् में दार्शनिक सन्दर्भ

डॉ0 वीरेन्द्र कुमार मौर्य
असि0प्रोफेसर–संस्कृत
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
आलापुर, अम्बेडकर नगर, उ0प्र0

महावीरचरितम् नाटक के नान्दी श्लोक में ही परमतत्त्व की नमस्क्रिया के रूप में दार्शनिक निर्देश प्राप्त होता है–

**'अथस्वस्थाय देवाय नित्याय हतपाप्मने।**
**व्यक्तक्रमविभागाय चैतन्यज्योतिषेनमः।।'**[1]

यहाँ परपरमात्मा को स्वस्थ अर्थात् आधार निरपेक्ष कहा गया है। इसी प्रकार उसे नित्य अर्थात् उत्पत्ति एवं विनाश से रहित भी बताया गया है। उस परमात्मा का सम्बन्ध किसी भी पाप या पाप के फल से नहीं होता। इसीलिए वह जरा, मरण, दुःख आदि के सम्पर्क से शून्य है। यही नहीं, उत्पत्ति, स्थिति और विनाश के रूप में जो वस्तुओं का क्रम विभाग होता है, उस से भी परमात्मा ऊपर है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि जगत् का जन्मादि क्रम होता है, ब्रह्म का नहीं। ब्रह्म लोकोत्तर तत्त्व है। चैतन्य ज्योति वह परमात्मा ही है। परमात्मा के इस वर्णन में वेदान्त साहित्य का पूर्ण प्रभाव है। भर्तृहरि भी नीतिशतक के मङ्गलाचरण में ब्रह्म के प्रति ऐसा ही भाव प्रकट कर चुके हैं–

**'दिक्कालाद्यवच्छिन्नानन्तचिन्मात्रमूर्त्तये।**
**स्वानुभूत्येकमानाय नमः शान्ताय तेजसे।।'**[2]

महावीरचरितम् के नान्दी श्लोक के अनेक पद उपनिषदों से अविकल ग्रहण किये गये हैं।
इस नाटक के प्रथम अङ्क में राजा कुश ध्वज ब्रह्म का साक्षात्कार करने वाले सत्य निष्ठ महर्षियों का महत्त्व बताते हैं। यहाँ पर निरूक्त के **'साक्षात्कृतधर्माणः'** के स्थान पर **'साक्षात्कृतब्रह्माणोम हर्षयः'** का प्रयोग हुआ है।[3] इन महर्षियों से एक बार वार्तालाप हो जाने से ही अज्ञान रूप अन्धकार नष्ट हो जाता है, शाश्वत शान्ति मिल जाती है और लोक एवं पर लोक में कल्याण होता है। यदि ये परमात्मा साथ–साथ रहें तो मानव को गौरव प्राप्त होता है। प्रसन्न होकर ये लोग कुछ भी कह दें तो अनन्त फल की प्राप्ति हो जाती है।[4] इस प्रकार भवभूति ब्रह्मज्ञ ऋषियों के सम्पर्क का पारमार्थिक फल अर्थवाद के रूप में प्रकट करते हुए पूर्वमीमांसा एवम् उत्तर मीमांसा का युगपत् प्रयोग करते हैं।

भारतीय दर्शन में, विशेष रूप से वेदान्त में परमतत्त्व के वर्णन में मन और वाणी की अगोचरता का कथन होता है। इस दार्शनिक अभिव्यक्ति को संस्कृत साहित्य में बहुत अधिक लोकप्रियता प्राप्त हुई है। कभी–कभी किसी वर्ण्य विषय का सौन्दर्यातिशय प्रकट करने के लिए अथवा किसी व्यक्ति की गरिमा दिखाने के लिए भी इस अभिव्यक्ति का प्रयोग होता है। भवभूति भी इस सामान्य स्थिति से भिन्न नहीं। तभी तो राजा कुश ध्वज रघुवंशियों के उत्कर्ष के विषय में कहते हैं–

**'राज्ञां वो महिमा न जातुवचनप्रज्ञानर्योगोचरः।'**[5]

अर्थात् उन रघुवंशी राजाओं की महिमा वाणी और बुद्धि से परे है। इसी प्रकार की भाषा का प्रयोग राजा कुश ध्वज विश्वामित्र की स्तुति में करते हैं। वे कहते हैं कि आप की महिमा के साहस का वर्णन करने वाला स्तोता अपने वचन ओर चित्त में यथार्थ ज्ञान विषयक शक्ति न पाकर प्रवृत्ति के विफल होने से विपन्न होकर लज्जित हो जाता है–

**'ज्वलिततपसस्तेजोराशेर्जगत्यमितौजसस्तव निरवधौ महाभाग्ये कृतस्तुतिसाहसः।**
**प्रमिति विषयां शक्तिं विन्दन् वाचि न चेतसि प्रतिहतपरिस्पन्दः स्तोता विपद्य घृणीयते।।'**[6]

इस श्लोक में निरवधि, प्रमितिविषय, परिस्पन्द आदि दार्शनिक शब्दों का कुशलता से प्रयोग हुआ है। न्याय–वैषैषिक दर्शन में प्रमिति विषय एक प्रसिद्ध दार्शनिक शब्द है। प्रमिति का अर्थ है– **'यथार्थ ज्ञान'।** इसका उत्कृष्ट साधन ही प्रमाण कहलाता है। इस प्रकार न्याय की भाषा का प्रयोग करके विश्वामित्र की स्तुति की अनिर्वचनीयता दिखायी गयी है।

महावीरचरितम् नाटक के चतुर्थ अङ्क में शूर्पणखा का मन्थरा के शरीर में प्रवेश दिखाया गया है। यह तात्कालिक विश्वास के अनुरूप विषय है। भवभूति के समय सामान्य जनता में तन्त्र की इस शक्ति का प्रचार था जिसके द्वारा व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति के शरीर मे प्रविष्ट कर सकता था।

षष्ठ अङ्क में राम रावण के युद्ध का वर्णन करते हुए चित्ररथ एक मार्मिक बात कहता है कि प्रत्यक्ष और अनुमान इन दो प्रमाणों से प्राप्त होने वाली एक ही वस्तु में बहुत बड़ा अन्तर हो जाता है।[7] इसे स्पष्ट करते हुए वह कहता है कि रावण के चरित्र से राम का चरित्र प्रत्यक्षतः दस गुना बड़ा लगता है किन्तु समीप में गिरने वाले राक्षसों रूण्डों से अनुमान करने पर सौ गुना हो जाता है।[8] इस प्रत्यक्ष और अनुमान इन दोनों से राम के चरित्र और बल का ही बोध हो रहा है, किन्तु दोनों के निष्कर्ष में अन्तर है। यद्यपि दार्शनिक दृष्टि से यह दोष है तथापि लोकोत्तर प्रवृत्त होने वाले काव्य के लिए यह गुण ही है।

चित्ररथ पाञ्च भौतिक सृष्टि के नियम का निरूपण करते हुए कहता है कि जिन राक्षसों के रहने के लिए त्रिलोक पर्याप्त नहीं था, वे सभी मरकर यहीं लींन हो रहे हैं। यहाँ ध्वनि यह है कि जो राक्षस दण्डायमान होकर पञ्चभूतों में ठहर नहीं पाते थे, वे केवल पृथिवी में ही लींन हो रहे हैं।[9]

इस नाटक के सप्तम अङ्क में रावण वध के बाद लंका और अलका के संवाद में जो मिश्र विष्कम्भक दिया गया है उसमें राम को ब्रह्म का अवतार बताया गया है। वही परमार्थियों के लिए परमतत्त्व हैं, वे साक्षात् पुराण पुरुष हैं, तीन भागों में बटी हुई प्रकृति हैं, जो सज्जनों की रक्षा के लिए पृथिवी पर अवतीर्ण हुए हैं–

**'इदं हि तत्त्वं परमार्थभाजामयं हि साक्षात्पुरुषः पुराणः।**
**त्रिधा विभिन्ना प्रकृतिः किलैषा त्रातुं भुवं स्वेन सतोऽवतीर्णा।।'**[10]

इस पद्य में सांख्य दर्शन की प्रकृति का उल्लेख है,जो सत्त्व, रजस् और तमस् इन तीन गुणों में विभक्त है। यहाँ भवभूति राम को इस प्रकृति का ही अवतार मानते हैं। प्रकृति जगत् का मूल कारण है, जो समस्त जगत् में विविध दृश्यों को उत्पन्न करती है। किन्तु वह जड रूप है इसलिए उसका अवतार यदि सज्जनों की रक्षा के लिए माना जाता है जो यह दार्शनिक असंगति है तथापि सांख्य दर्शन के पुरूष तत्त्व को अक्रिया शील मानकर उसका अवतार भी नहीं कहा जा सकता। इसीलिए कवि ने एक सिद्धान्त के अनुसार प्रकृति का ही अवतार माना है। राम को वे पुरातन पुरूष भी कहते हैं, इसलिए किसी प्रकार का दोष नहीं रह जाता। अवतार ग्रहण का उद्देश्य सज्जनों की रक्षा और दुष्टों का नाश है। जैसा कि गीता में कहा भी गया है–

**'परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्। धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।।'**[11]

इसी अङ्क में जब राम भरत का आलिंगन करते हैं तब वेवेदान्त की भाषा का प्रयोग करते हैं– ' **अनुभावयति ब्रह्मानन्द साक्षात्क्रियामिव।'**[12] अर्थात् हे भरत! तुम्हारा यह रोमाञ्च युक्त स्पर्श ब्रह्मानन्द के साक्षात्कार का आस्वादन कराता सा प्रतीत हो रहा है। ब्रह्मानन्द ज्ञाता, ज्ञान और श्रेय की त्रिपुटीका लय करा देता है। इसमें अखण्ड आनन्द की अनुभूति होती है। साहित्य शास्त्रियों ने इसीलिए रसानुभूति को भी ब्रह्मानन्द सहोदर कहा है।

सन्दर्भग्रन्थसूची


1–महावीरचरितम् 1/1
2–नीतिशतकम् 1
3–छान्दोग्योपनिषद् 8/7/3
4–महावीरचरितम् अङ्क 1, पृष्ठ 12
5–महावीरचरितम् 1/25
6–महावीरचरितम् 1/51
7–महावीरचरितम् 6/57 के बाद का गद्य भाग, पृष्ठ 291
8–महावीरचरितम् 8/58
9–महावीरचरितम् 8/60
10–महावीरचरितम् 7/2
11–श्रीमद्भगद्गीता 4/8
12–महावीरचरितम् 7/31